कड़वे बादाम :

दिल्ली की बादाम इकाइयों में मज़दूरों का शोषण

पीपल्स यूनियन फॉर डैमाक्रैटिक राइट्स
दिल्ली
मई 2012

प्रस्तावना

उत्तर-पूर्वी दिल्ली के दूर-दराज़ कोने में बसी हुई, शोर-गुल और चहल-पहल भरी - करावल नगर की बस्ती, अनौपचराचिक क्षेत्र के उद्यमों का एक उभरता हुआ केन्द्र है, जहाँ बड़ी संख्या में प्रवासी मज़दूर और उनके परिवारों को रोज़गार मिलता है। ये उद्यम किसी भी मानक से छोटे नहीं है। वैश्विक संबंध की जटिल श्रंखला में बंधे ये उद्यम, साल भर चालू रहते हैं और कई हज़ारों मज़दूरों के रोज़गार का स्रोत हैं। कई करोड़ रूपयों की आमदनी वाला बादाम उद्योग, इस इलाके में फल-फूल रहा ऐसा ही एक व्यवसाय है, जहाँ कैलिफोर्निया से बोरे के बोरे बादाम आते हैं, करावल नगर की संकरी-अंधेरी गलियों में पहुँते हैं और वहाँ छिलका तोड़ने, साफ करने और पुन: पैक किए जाने के बाद घरेलू और अंतर्राष्ट्रीय दोनों ही बाज़ारों में बिक्री के लिए भेज दिए जाते हैं।

यहाँ के मज़दूरों की बुरी दशा पहली बार तब सामने आयी जब दिसम्बर 2009 में, इस उद्योग में काम करने वाले मज़दूरों ने बेहतर मज़दूरी की मांग के लिए हड़ताल कर दी। उसके बाद के दो वर्षों से भी अधिक समय से पी.यू.डी.आर. की टीम ने मज़दूरों के हालात जानने के लिए कई बार अपनी टीम वहाँ भेजीं, जिन्होंने काम के तौर-तरीकों के दो चरणों के बारे में जांच की - पहला, जब सारा काम हाथ से होता था और दूसरा चरण, जब काम के एक हिस्से को मशीनीकृत कर दिया गया। इस रिपोर्ट में, जांच पड़ताल के दौर में सामने आए तथ्यों को प्रस्तुत किया गया है। हमें एहसास है, कि अभी भी बहुत कुछ अनकहा रह गया है। बादाम उद्योग के मज़दूरों के हालात को केन्द्रित करते हुए, यह रिपोर्ट अनौपचारिक क्षेत्र के रोज़गार के अत्यन्त शोषक और जोख़िमपूर्ण चरित्र को भी उजागर करना चाहती है; वह क्षेत्र जो आज देश की कुल कार्य शक्ति का लगभग 94 प्रतिशत हिस्सा है।

बादाम प्रसंस्करण (प्रोसेसिंग) कार्य का चरित्र

करावल नगर, पूर्वी दिल्ली, में बादाम तोड़ने और पैक करने की लगभग 45-50 इकाइयाँ हैं जहाँ पूरे साल काम होता है और जहाँ से बादाम खारी बावली में स्थित सूखे मेवे और मसालों के थोक बाज़ार में पहुँचते हैं। बादाम की खेप जहाजों में भर कर अहमदाबाद और मुम्बई पहुँचती है जहाँ से इसे दिल्ली पहुँचाया जाता है। बादाम विश्वभर के पैमाने पर एक काफी कीमती उत्पाद है। हाल के समय में 'स्वास्थ्य' को लेकर बढ़ी हुए चेतना और बादाम के स्वास्थ्यवर्धक गुणों की लोकप्रियता के कारण पूरे विश्व में इसकी मांग तेजी से बढ़ी है। मध्यवर्ग के आकार और समृद्धि दोनों में वृद्धि होने के साथ भारत में भी ठीक यही प्रवृति

दिखाई दे रही है, जिसने बादाम के व्यापार और आयात को, खासकर सयुंक्त राज्य अमेरिका से, बहुत अधिक तेजी दी है। भारत में अमेरिका से खोल-युक्त बादाम के आयात में आयी तेजी केवल बादाम के बढ़ते उपभोग का ही नतीजा नहीं है। भारत, और मुख्यत: दिल्ली सस्ते श्रम की उपलब्धता के कारण बादाम के छिलके उतारने और प्रसंस्करण के मुख्य केन्द्र के रूप में स्थापित हुए हैं। खोल रहित और प्रसंस्कृत बादाम को पैकिंग और बेचने के लिए विश्व के अलग-अलग हिस्सों में पुन: निर्यात कर दिया जाता है। 2007 और 2009 के बीच भारत, स्पेन और जर्मनी को पीछे छोड़ते हुए अमेरिकी बादाम का दुनिया का सबसे बड़ा आयातक बन गया। आयात्ति बादाम का लगभग 80% खारी बावली के बाज़ार में पहुँचता है। 2007-08 वर्ष के लिए कैलिफोर्निया के बादाम परिषद द्वारा प्रकाशित एमंड इडस्ट्री पोज़ीशन रिपोर्ट के अनुसार भारत 12.86% शेयर के साथ अमेरिका से बादाम के आयात में विश्व में दूसरे स्थान पर पहुँच गया है।

खारी बावली के थोक व्यापारी बादाम के छिलके उतारने, सफाई, ग्रेडिंग और पैकिंग का काम ठेके पर कराते हैं। हांलाकि बादाम तोड़ने और प्रसंस्करण का लगभग 80% काम करावल नगर में ही किया जाता है, लक्ष्मीनगर, बुराड़ी, पतपड़गंज और त्रिलोकपुरी में भी यह कारोबार होता है। शुरूआत में यह काम

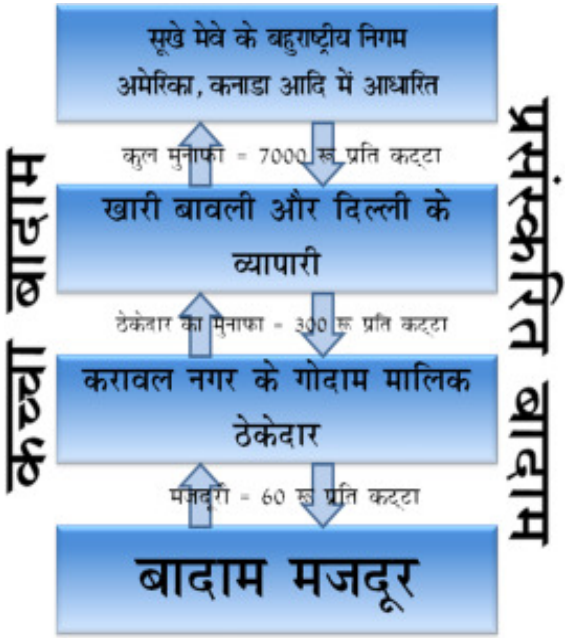

कमोबेश पीस रेट पर घर-आधारित उत्पादन के रूप में होता था। लेकिन जैसे-जैसे बादाम व्यापार का विस्तार हुआ घर पर होने वाला यह काम वर्कशॉप और गोदामों में भी होने लगा। करावल नगर की अधिकांश इकाइयाँ अब गोदामों से ही संचलित की जाती हैं और मज़दूरों को भुगतान पीस रेट और नियत रेट दोनों ही रूपों में होता है।

कार्य और श्रम शक्ति

करावल नगर इलाके में कार्यरत बादाम मज़दूर यूनियन के अनुसार इलाके में बादाम से छिलका उतारने और प्रसंस्करण में 20,000 से भी अधिक मज़दूर काम करते हैं। इनमें से अधिकांश मज़दूर बिहार से आए प्रवासी मज़दूर हैं और कुछ पूर्वी उत्तर प्रदेश और उत्तराखण्ड से। इनमें से अधिकांश महिलाएं हैं। मज़दूरों को ठेकेदारों के माध्यम से काम मिलता है। वैसे तो बादाम प्रसंस्करण एक बारहमासी उद्योग है लेकिन दिवाली से लेकर क्रिसमस तक अर्थात अक्टूबर से दिसम्बर के दौरान, माँग और आपूर्ति दोनों ही अपने चरम पर होती हैं। इस दौरान रोज़ाना औसतन 12-15 घण्टे काम होता है। उत्पादन की पूरी प्रक्रिया में खोल को तोड़ना, खोल में से बादाम के दाने निकालना, ग्रेडिंग और पैकिंग शामिल होते हैं। छोटे-छोटे बच्चों को खोल-युक्त बादाम को तोड़ने के लिए बादाम के ढ़ेर पर कूदते हुए देखा जा सकता है। यही नहीं बादाम को खोल से निकालने में भी इनको काम पर लगाया जाता है। इस पूरी प्रक्रिया में, काम करने वालों संख्या के अनुसार, लगभग 2-3 घण्टे का समय लगता है। छिलका बिना हटे बादाम के एक बोरे में (छिलके के साथ) औसतन लगभग 22 कि.ग्रा. बादाम होता है जिसमें से लगभग 16-17 कि.ग्रा. छिला हुआ बादाम निकलता है। छिलके को ठेकेदारों द्वारा हरियाणा के ईंट-भट्ठों को 1 से 1.40 रू की कीमत पर बेचा जाता है। इसके अलावा इसका कुछ हिस्सा बादाम मालिकों द्वारा मज़दूरों को सामान्यत: 30-35 रू. प्रति कट्टे के भाव पर बेचा जाता है, जिसे मज़दूर ईंधन के रूप में इस्तेमाल करते हैं। जबकि बादाम बाज़ार में, गुणवत्तानुसार, 360-400 रू. प्रति किलो के हिसाब से बेचा जाता है लेकिन इसके प्रसंस्करण में लगे मज़दूरों को उनके काम के बदले इसका बहुत ही नगण्य हिस्सा मिलता है।

2010 के अंत में, जब से इस काम में मशीनों का इस्तेमाल किया जाने लगा, काम का चरित्र काफी हद तक बदल गया। मशीन का इस्तेमाल केवल बादाम तोड़ने में होता है, छिलके हटाने और ग्रेडिंग का काम अभी हाथों से ही किया जा रहा है। आंशिक मशीनीकरण का यह दौर कैलिफोर्निया के बादामों के भारत में लगातार तेजी से बढ़ते आयात से मेल खाता है। मशीनीकरण अपने साथ मज़दूरी संबंधी कई नयी समस्याएं लेकर आया है, और जैसा कि हम आगे देखेंगे, इसने रोज़गार की उपलब्धता को भी कम किया है।

मज़दूरी

पिछले दो सालों के दौरान आंशिक मशीनीकरण के कारण मज़दूरी के भुगतान के तरीकों में बदलाव आया है। दिसम्बर 2009 से पहले 22 किलो बादाम के प्रसंस्करण के लिए मज़दूरों को 40 रू. दिए जाते थे। मज़दूर की कुशलता और क्षमता के अनुसार, एक कट्टा बादाम के प्रसंस्करण में लगभग 8 से 10 घण्टे का वक्त लगता था। जिसका मतलब था कि मज़दूरों को दिल्ली में 8 घण्टे काम के लिए अकुशल मज़दूरों के लिए निर्धारित न्यूनतम मज़दूरी, 152 रू. (दिसम्बर 2009 में), का लगभग एक तिहायी भुगतान किया जाता था।

दिसम्बर 2009 में बादाम मज़दूर यूनियन के बैनर तले की गयी बादाम मज़दूरों की 15 दिनों की हड़ताल के बाद मज़दूरी की दर 40 रू. से बढ़ कर 60 रू. हो गयी, लेकिन यह अभी भी न्यूनतम मज़दूरी की एक तिहायी ही थी। बादाम प्रोसेसिंग की एक विशेषता यह है कि अक्सर यह काम मज़दूर के परिवार के सदस्यों द्वारा मिलकर किया जाता है। ऐसा केवल घरेलू इकाइयों में ही नहीं होता बल्कि गोदामों में भी या तो परिवार के सदस्य मिल कर काम करते हैं या फिर कई अन्य गांवों के आधार पर या किन्हीं अन्य संबंधों के आधार पर समूहों में काम करते हैं। इसलिए अगर कोई परिवार एक दिन में 3 कट्टे बादाम प्रसंस्करित कर सकता है तो वह 180 रू. कमा लेगा। लेकिन इतनी राशि कमाने के लिए परिवार के 2-3 सदस्यों को घण्टों तक संयुक्त रूप से काम करना पड़ता है और इस तरह से एक अकेला व्यक्ति 60 से 90 रू. से अधिक नहीं कमा सकता।

मज़दूरी का भुगतान भी अनिश्चित होता है और इस तरह से यह भी शोषण का जरिया बन जाता है। मालिक के अपने रिकार्ड के अलावा मज़दूरों को किए जाने वाले भुगतान का कोई और रिकार्ड नहीं रखा जाता है, इसलिए मज़दूरी भुगतान की कोई पारदर्शी व्यवस्था व्यवहार में काम नहीं करती। मज़दूरी के भुगतान की कोई निश्चित तिथि भी नहीं है। इसके साथ ही भुगतान में अक्सर खूब देरी होती रहती है। ऐसे भी केस हैं जिनमें मज़दूरों को उनके बकाए का भुगतान ही नहीं किया गया। किसी भी प्रकार के रोज़गार प्रमाण के अभाव में यानी मज़दूरी का पक्का रिकार्ड न होने के कारण, मज़दूर अपनी बकाया मज़दूरी के लिए कोई दावा भी नहीं कर सकते।

2010 से बादाम के खोल तोड़ने के काम के मशीनीकरण के साथ ही, मज़दूरों की दशा और अधिक बदतर हो गयी है। जैसा कि पहले बताया

मज़दूरी की तुलना में बादाम प्रसंस्करण की लागत

उत्पादन की लगात की आसान गणना यह बताती है कि मशीनीकरण के पहले बादाम के प्रत्येक कट्टे के प्रसंस्करण के लिए ठेकेदार को 60 रू. खर्च करने पड़ते थे। लेकिन अब खोल हटाने और प्रसंस्करण की लागत नीचे चली गयी है। ठेकेदार बादाम के प्रत्येक कट्टे के प्रसंस्करण के लिए 25-30 रू. खर्च करते हैं - 5 रू. प्रति कट्टा खोल तोड़ने का, 16-17 रू. सफाई और पैकिंग तथा अन्य खर्चों के लिए। ऊपर से मशीनीकरण के कारण काम की बढ़ी हुई दर, ठेकेदारों के लिए अतिरिक्त मुनाफा पैदा करती है। पहले प्रति कट्टा खोल तोड़ने और प्रसंस्करण में 8-10 घण्टे लगते थे। मशीनीकरण के साथ उतना ही काम बहुत तेजी से हो जाता है।

गया है, ठेकेदारों द्वारा लगायी गयी मशीनों से खोल तोड़ने का काम काफी तेजी से हो जाता है लेकिन बादाम और छिलके को अलग-अलग करने का काम अभी हाथों से ही किया जाता है।

मशीनीकरण के बाद, मज़दूरी के भुगतान में अनिश्चितता में कोई फर्क नहीं आया, पर मज़दूरी का मामला और अधिक उलझा हुआ और अनिश्चित हो गया। मशीनीकरण से बादाम को तोड़ने के काम की दक्षता में तो निःसंदेह रूप में ठेकेदारों के मनमुआफिक वृद्धि हुई, लेकिन मज़दूरों की दशा के संबंध में कोई सुधार नहीं हुआ। जून 2011 में पी.यू.डी.आर. की टीम के करावल में कई मज़दूरों से मिली। ये मज़दूर अपने भविष्य को लेकर काफी चिंतित थे। वे इस बात से आशंकित थे कि मशीनों के आने जाने से उनकी मज़दूरी पहले के मुकाबले आधी ही रह जाएगी। एक मालिक ने हमें बताया कि एक मशीन से एक घण्टे में लगभग 20 कट्टा बादाम तोड़े जा सकते हैं। जिन महीनों में काम कम होता हैं, अभी तक जहाँ एक दिन में केवल 80-100 कट्टों की ही सफाई हो पाया करती थी, मशीनीकरण के बाद इनकी संख्या सीधे-सीध 350-400 कट्टे प्रति दिन की तक बढ़ गयी। मशीनीकरण के कारण काम की दर में तेजी आने से और मज़दूरों की आवश्यकता में कमी आने से, मज़दूरों को इन उत्पादन इकाइयों में काम पाने में दिक्कत का सामना करना शुरू हो गया है।

मशीनीकरण के बाद मज़दूरी के संदर्भ में, मज़दूरों को भुगतान की प्रणाली के आधार पर तीन श्रेणियों में बाँटा जा सकता है। पहली श्रेणी उन लोगों की है जिनको ठेकेदारों ने काम की प्रगति और गति पर नज़र रखने और काम के दौरान मज़दूरों द्वारा बादाम चुराने की संभावना को कम या खत्म करने के लिए मज़दूरों पर नज़र रखने के लिए रखा है। ये लोग संख्या में बहुत कम हैं और मासिक वेतन पर रखे जाते हैं। हमने इकाइयों में काम करने वालों बच्चों को काम खत्म करके जाने से पहले अपनी तलाशी कराने के लिए खुद इनके पास आते देखा है। दूसरी तरफ बादाम प्रसंस्करण का काम दो भागों में बंट गया है। कुछ मज़दूर केवल बादाम को मशीन में डालने का काम करते

हैं, जबकि अन्य सफाई और परिशोधन का। मशीनों से बादाम तोड़ने का काम पूरी तरह से पुरूष मज़दूरों के लिए आरक्षित है। बादाम तोड़ने के लिए प्रति कट्टा 5 रू. मिलते हैं। दूसरी ओर सफाई और परिशोधन का काम 1 रू. प्रति कट्टे के पीस रेट पर औरतों और बच्चों द्वारा कराया जाता है। मशीन से एक कट्टा बादाम तोड़ने में बस कुछ मिनटों का ही समय लगता है। इस प्रकार एक पुरूष अपने साथ काम करने वाली स्त्रियों की तुलना में बराबर समय में ज़्यादा मज़दूरी पा रहे हैं। इस तरह से काम का यह विभाजन पुरातन लिंग आधारित भेदभावपूर्ण सामाजिक व्यवस्था को मजबूत का एक और उदाहरण बन गया है। और यह स्पष्ट है कि मशीनीकरण के बाद महिला-मज़दूरों की मज़दूरी में गिरावट आयी है। यहाँ यह भी ध्यान में रखना चाहिए कि पुरूष मज़दूरों की दशा में थोड़ा सुधार तो ज़रूर आया है, लेकिन अभी भी उनको मिल रही मज़दूरी अकुशल मज़दूर के लिए निर्धारित न्यूनतम मज़दूरी के बराबर नहीं है।

काम करने की स्थिति

बादाम को छिलका रहित करने का काम बेहद कठिन और जोखिमभरा होता है। बादाम निकालने के लिए जो खोल तोड़ा जाता है वह काफी सख्त होता है और उसे नरम बनाने के लिए रसायनों का प्रयोग किया जाता है। यह पूरा काम नंगे हाथों से किया जाता है और लम्बे समय तक काम करने से लगभग सभी मज़दूरों की उंगलियों के पोरों पर घाव हो जाते हैं और दरारें पड़ जाती हैं जिनमें सर्दियों में बहुत अधिक दर्द होता है। ये घाव खोल के खुरदुरेपन और/या रसायनों के प्रभाव, दोनों ही वजहों से हो सकते हैं। हड़ताल के दौरान भी हम जितने भी मज़दूरों से मिले, उनमें से अधिकांश के हाथों और उंगलियों में घाव के निशान थे। उनके हाथों में ये घाव बादाम तोड़ते समय पड़े थे। ये मज़दूर लगभग एक हफ्ते से काम पर नहीं गये थे फिर भी उनके ये घाव बहुत पीड़ादायी बने हुए थे।

दूसरी बात, बादाम के परिशोधन के दौरान काफी धूल उत्पन्न होती है। और इससे बचने के लिए मज़दूरों के पास केवल एक छोटा सा कपड़े का टुकड़ा होता है। इस धूल से कई सारी सांस से संबंधित दिक्कतें हो सकती हैं। यह बात यहीं पास में रह रहे एक डाक्टर ने सत्यापित भी कर दी और उनके क्लिनिक में मौजूद नेबूलाइज़र ने भी। डाक्टर ने हमें बताया कि मरीजों के मुँह और नाक से अक्सर खून के थक्के निकलते रहते हैं। उन्होंने यह भी बताया कि मुख्य रूप से ठेकेदारों द्वारा निश्चित समय पर भुगतान न करने की वजह से मज़दूरों को कई अन्य बिमारियों जैसे मियादी बुखार और हैजा आदि का इलाज टालते रहना पड़ता है या बीच में ही छोड़ना पड़ता है। मशीनीकरण ने इस समस्या को और विकट कर दिया है। जिन कमरों में मशीनें हैं वहाँ इंचों मोटी धूल की परत जमी रहती है। रिहायशी इलाकों में निहायत बुनियादी नागरिक सुविधाओं जैसे पीने योग्य पानी

और जल निकासी की सुविधाओं का अभाव भी स्वास्थ्य संबंधी परेशानियों को और अधिक बढ़ा देता है।

और चुंकि ये तक साबित नहीं किया जा सकता कि मज़दूर किसी फला ठेकेदार के तहत काम करते हैं, इसलिए मज़दूरों के स्वास्थ्य के संदर्भ में उनकी कोई जवाबदेही तय करने का तो सवाल ही नहीं उठता, फिर चाहे वह उपचार उपलब्ध कराने का मामला हो या रहने सहने की सुविधाएं मुहैया कराने का। एक तरफ तो खुद ठेकेदार द्वारा देरी से मज़दूरी के भुगतान मज़दूरों के लिए उपचार करवाना असंभव बना देता है तो दूसरी तरफ किसी चिकित्सीय आपातस्थिति में ठेकेदारों से कोई वित्तीय या किसी भी अन्य तरह की सहायता की उम्मीद नहीं की जा सकती।

फैक्टरी ऐक्ट क्या कहता है?

[अध्याय 1, खण्ड 2 (*एम*)]

''कारखाना'' ऐसा परिसर, उसके आस-पड़ोस को शामिल करके-

(i) जहाँ 10 या ज़्यादा मज़दूर काम कर रहे हैं, या पूर्ववर्ती बारह महीनों के किसी भी दिन काम कर रहे थे, और जिसके किसी भी हिस्से में बिजली की सहायता से उत्पादन प्रक्रिया चलाई जा रही हो, या सामान्य रूप से चलायी जाती है, या

(ii) जहाँ 20 या अधिक मज़दूर काम कर रहे हों, या पूर्ववर्ती बारह महीनों के किसी भी दिन काम कर रहे थे, और जिसके किसी भी हिस्से में बिजली की सहायता से उत्पादन प्रक्रिया चलाई जा रही हो, या सामान्य रूप से चलायी जाती है.

[अध्याय 9- विशेष प्रावधान]

ऐक्ट को किसी खास परिसर में लागू करने के अधिकार. (1) राज्य सरकार, सरकारी राजपत्र में अधिसूचना द्वारा, यह घोषित कर सकती है कि इस ऐक्ट के सभी या कोई प्रावधान उस जगह पर लागू होंगे जहाँ उत्पादन प्रक्रिया बिजली से या बिना बिजली के चलाई जा रही हो या चलाई गयी हो, इसके बावजूद कि-

(i) उसमें काम पर लगे व्यक्तियों की संख्या 10 से कम हो, यदि बिजली की सहायता से उत्पादन नही होता है, और 20 से कम यदि बिजली की सहायता से उत्पादन होता हो, या

(ii) उसमें काम करने वाले व्यक्ति उसके मालिक द्वारा न नियुक्त किए गए हों लेकिन ऐसे मालिक की आज्ञा या सहमती पर काम कर रहे हों।

बादाम परिशोधन और राज्य

जैसा कि ऊपर बताया चुका है कि बादाम परिशोधन इकाइयों में हज़ारों की संख्या में मज़दूर काम करते हैं और काम पूरे साल चालू रहता है। इस तरह यह काम अपने स्वभाव से तो स्थायी श्रेणी का है लेकिन मज़दूरों को अनियमित आधार पर अनौपचारिक रूप से खटाया जाता है। उन्हें किसी भी प्रकार का रोज़गार का प्रमाण, जैसे पहचान पत्र, वेतन स्लिप आदि नहीं दी जाती है कोई हाजरी रजिस्टर भी नहीं रखा जाता है।

परिणामस्वरूप इतना बड़े स्तर पर उत्पादन होने के बाद भी मज़दूरों की काम की परिस्थितियों पर निगरानी रखने के लिए कोई व्यवस्था मौजूद नहीं है। यह एक मज़ाक ही है कि कानूनी रूप से ये ठेकेदार श्रम कानूनों के पालन के लिए बाध्य ही नहीं हैं, और मज़दूरों की शिकायतों की सुनवायी करने के लिए कोई प्रक्रिया मौजूद ही नहीं है। इस काम को एक 'उद्योग' के रूप में मान्यता नहीं मिली हुई है। उलटे अस्पष्ट रूप से परिभाषित 'घरेलू उत्पादन' श्रेणी के अंतर्गत आने के कारण ये इकाइयाँ वर्तमान श्रम कानूनों के दायरे से बाहर रहती हैं। दिल्ली के श्रम विभाग के अनुसार, काम करने के अपने स्तर के कारण ये इकाइयाँ 'संगठित क्षेत्र' की परिभाषा से बाहर रह जाती हैं। संगठित क्षेत्र, बिजली के साथ 10 मज़दूरों के काम करने या बिजली के बिना 20 मज़दूरों के काम करने के रूप में परिभाषित किया जाता है। इस तर्क से तेजी से फैलते अनौपचारिक क्षेत्र, जिसमें कि आज देश की कुल कार्य शक्ति का 94 फीसदी काम करता है, श्रम कानूनी के अधिकार क्षेत्र के बाहर हो जाता है। करावल नगर और आस-पास के इलाकों में कुकुरमुत्तों की तरह बढ़ती इन इकाइयों को फैक्टरियों के रूप में मान्यता न दिए जाने से सीधे-सीधे मज़दूरी, ओवर-टाइम आदि मसलों पर मालिकों के मुकाबले में मज़दूरों की मोलभाव की क्षमता को नगण्य बना देता है।

नौकरशाही की मिलीभगत भी काफी स्पष्ट है क्योंकि श्रम विभाग या तो यह सब कुछ देखकर उदासीन बना रहता है या सक्रिय रूप से अपनी मौन सहमती भी दे देता है। यहाँ बता दें कि श्रमविभाग असल में मज़दूरों की भलाई के लिए बनाया गया है। बादाम मज़दूर यूनियन ने पहले भी एक बार कानूनी रूप से न्यूनतम मज़दूरी संबंधी शिकायत के साथ श्रम विभाग का दरवाजा खटखटाया था। लेकिन लेबर कमिशनर और उसके ऑफिस ने यह कह कर हस्तक्षेप करने से कन्नी काट ली कि यह घरेलू काम है और इसलिए कानूनी दायरे के बाहर है। बादाम मज़दूरों की दुर्दशा की तरफ श्रम विभाग का ध्यानाकर्षित करने के उद्देश्य से, पी.यू.डी.आर. ने भी 30 दिसम्बर 2009 और 11 जनवरी 2010 को पत्र लिखकर इस मामले में हस्तक्षेप करने और दिल्ली सरकार से बादाम प्रसंस्करण इकाइयों को उचित संशोधन द्वारा अनुसूचित उद्योगों के अंतर्गत लाने

का अनुरोध किया, ताकि यहाँ फैक्टरी ऐक्ट 1948 और न्युनतम मज़दूरी अधिनियम 1948 लागू हो सकें। इसके बाद, डिप्युटी लेबर कमिशनर (डी.एल.सी.), पूर्वी और उत्तर-पूर्वी दिल्ली, की ओर से पी.यू.डी.आर. को मिलने के लिए बुलाया गया। इस बैठक में डी.एल.सी. ने हमें ठेकेदारों के नाम, उन मज़दूरों का नाम जिन्हें शिकायतें हैं और यूनियन का नाम और रजिस्ट्रेशन नम्बर बताने के लिए कहा गया। यह पूरी तरह से गोल गोल घुमाने वाला तर्क है। किसी अनौपचारिक या कैजुवल श्रम प्रक्रिया की सबसे मुख्य दिक्कत नियोक्ता और कर्मचारी की पहचान स्थापित करने की होती है। यूनियन के रजिस्ट्रेशन नम्बर की माँग भी अत्यन्त हास्यासपद है क्योंकि यूनियन का रजिस्ट्रेशन तो तब तक नहीं हो सकता जब तक कि व्यवसाय को ही मान्यता न मिल जाए। डी.एल.सी. का कहना था कि इस मामले में वह हमारी कोई मदद नहीं कर सकते क्योंकि व्यवसाय को औपचारिक की श्रेणी में लाना उसके अधिकार क्षेत्र के बाहर आता है और उन्होंने मामले को बंद करने की मांग की। इन यूनिटों में सैंकड़ों की तादाद में मज़दूर काम करते हैं और इस तरह ये आसानी से फैक्टरी ऐक्ट की परिभारषा के अनुसार फैक्टरी की श्रेणी में आ सकती हैं। यानी फैक्टरी ऐक्ट में पर्याप्त गुंजाइश मौजूद होने पर भी श्रम नौकरशाही और राजनैतिक प्रतिष्ठानों, दोनों ही ने इन अनौपचारिक व्यवसायों को मान्यता देने के लिए, ताकि इनमें श्रम कानून लागू हो सकें, बहुत ही कम कदम उठाए हैं (देखें बॉक्स फैक्टरी ऐक्ट)।

बादाम मज़दूरों के दो सालों के संघर्ष की कहानी : 2009-2011

दिसम्बर 2009 बादाम मज़दूर यूनियन के बैनर तले मज़दूरों ने मज़दूरी में बढ़ोत्तरी और काम की बेहतर परिस्थितियों के लिए दो हफ्ते लम्बी हड़ताल की। हड़ताल 16 दिसम्बर से 31 दिसम्बर 2009 तक चली। 23 दिसम्बर को लगभग 1500 मज़दूरों ने उद्योग के विनियमन और काम के बेहतर हालात के लिए जंतर-मंतर पर धरना प्रदर्शन किया।

हड़ताल के दौरान, मज़दूरों ने करावल नगर में सड़क के किनारे खाली पड़े एक जमीन के टुकड़े पर अपना टेण्ट लगाकर धरना प्रदर्शन किया। मज़दूरों द्वारा अपनी आजीविका को ताक पर रख कर दिसम्बर 2009 में 15 दिनों तक की गयी यह हड़ताल, मज़दूरों के साहस के कारण एक मिसाल बन गयी। इसने पुलिस के स्पष्टतः पक्षपातपूर्ण और संवेदनहीन रवैये को भी उघाड़ कर रख दिया। हड़ताल के दूसरे दिन ठेकेदारों ने अपने वफादार समर्थकों के साथ मिलकर महिलाओं के एक शांतिपूर्ण जुलूस, जिसमें कि उनके बच्चे भी साथ थे, पर हमला बोल दिया। जुलूस का नेतृत्व यूनियन के कुछ सदस्यों द्वारा किया जा रहा

था। इस हमले में यूनियन के दो सदस्य गंभीर रूप से घायल हो गये जबकि कुछ महिला मज़दूरों को हल्की चोटें आयीं। झड़प के दौरान हुई बहस में ठेकेदार, विशेष रूप से स्त्रियों को लक्षित करते हुए, जातिवादी गाली-गलौच और मज़दूरों को नीचा दिखाने के लिए घिनौनी भाषा के इस्तेमाल तक के स्तर तक नीचे उतर गए। इसके बाद हुए हंगामे में ठेकेदारों के चार गुण्डों को चोट लगी। जब पुलिस पहुँची तो उसने घायल ठेकेदार लठैतों को तो मेडिकल के लिए अस्पताल भेज दिया, जबकि यूनियन के घायल सदस्यों व कुछ अन्य हड़ताली मज़दूरों को बिना कोई मेडिकल सहायता उपलब्ध कराए गिरफ्तार कर लिया। ठेकेदारों के गुण्डों के कहने पर यूनियन के सदस्यों के खिलाफ एफ.आई.आर. भी दर्ज कर दी गयी, लेकिन मज़दूरों और यूनियन सदस्यों के बयान पर ठेकेदारों और उनके आदमियों पर कोई केस दर्ज नहीं किया गया। परिणामस्वरूप ठेकेदारों के जिन लोगों को पकड़ा गया था उन्हें उसी दिन कुछ समय बाद छोड़ दिया गया, लेकिन यूनियन कार्यकर्त्ताओं को अगले दिन मजिस्ट्रेट के समक्ष पेश किया गया और उसके भी अगले दिन जेल से छोड़ा गया।

पुलिस और मालिकों की साँठ-गाँठ का यह अकेला मामला नहीं है। हड़ताल के दौरान पुलिस लगातार मज़दूरों को धमकाती रही, और यह कहकर कि हड़ताल से कानून और व्यवस्था की समस्या खड़ी हो सकती है, हड़ताल खत्म करने के लिए उन पर दबाव डालती रही। 25 दिसम्बर 2009 को पुलिस ने मज़दूरों का अपना तम्बू हटाने के लिए मजबूर किया और धरने की जगह वाली ज़मीन के मालिक पर अपनी ज़मीन खाली कराने के लिए दबाव डाला। फलस्वरूप मज़दूरों को दिसम्बर की ठिठुरा देने वाली सर्द रातों में खुले आसमान के नीचे सड़क पर बैठ कर अपने विरोध प्रदर्शन को जारी रखने के लिए मजबूर होना पड़ा। पिछले दो सालों में यूनियन ने अपनी सदस्यता का विस्तार किया है और करावल नगर इलाके में स्थित अनौपचारिक क्षेत्र के अन्य उद्यमों, जैसे पेपर प्लेट उत्पादन में लगे मज़दूरों को भी यूनियन में शामिल किया है। करावल नगर मज़दूर यूनियन के नए नाम से काम करते हुए यूनियन इलाके की इन इकाइयों में काम करने वाले मज़दूरों के मुद्दों और सरोकारों को लेकर सक्रिय है।

निष्कर्ष

भूमण्डलीकरण और कई राष्ट्रीय सीमाओं में फैले उत्पादन के नए तरीके के साथ, विकसित और विकासशील दोनों ही प्रकार के देशों में श्रम शक्ति का अनौपचारिकीकरण तेजी से एक सामान्य प्रवृत्ति बनता जा रहा है। 1990-2005 के दौरान भारत में रोज़गार वृद्धि के आंकड़े अर्थव्यवस्था के अनौपचारिक और असंगठित क्षेत्र मे कार्यरत श्रमिकों की संख्या में हुई रिकार्ड वृद्धि को दर्शाते हैं। इसके बावजूद इस बेहद विषम क्षेत्र को श्रम कानूनों के दायरे के भीतर लाने के

लिए उठाए गए कदम पूरी तरह से निराशाजनक हैं। मौजूदा संघर्ष से पहले भी बादाम प्रसंस्करण उद्योग में काम करने वाले मज़दूरों द्वारा खुद को संगठित करने के प्रयास तालाबंदी और स्थानांतरण के रूप में समाप्त हुए थे। पहले बादाम प्रसंस्करण का एक बड़ा केन्द्र शकरपूर था, वहाँ से करावलनगर इलाके में स्थानांतरण आज से 10 साल पहले मज़दूरों की हड़ताल के कारण हुआ था। (इण्डियन ऐक्सप्रेस 5 जनवरी 2010)

करावल नगर अधिकांश मेट्रो शहरों में तेजी से बढ़ते अनौपचारिक और बेहिसाब निर्माण इकाइयों के जमघटों का एक उदाहरण भर है। दिल्ली में खुद, ऐसे कई विशिष्ट केन्द्र हैं जहाँ कई बड़े उत्पादन घरानों, जिनमें कई जानी-मानी बहुराष्ट्रीय कम्पनियां भी शामिल हैं, के लिए पीस रेट पर काम कराया जाता है।

काजू बनाम बादामः मज़दूरी की दो विपरीत कहानियाँ

बादाम और काजू दोनों ही सूखे मेवे के बाजार के सबसे महंगे उत्पाद हैं। काजू और बादाम दोनों ही उद्यमों में काम करने वाले मज़दूरों में लगभग 85 से 90 प्रतिशत महिलाएं हैं।

दिल्ली के बादाम मज़दूरों को प्रति कट्टे के हिसाब से भुगतान होता है और इसीलिए वे अकुशल मज़दूरों को मिलने वाली न्यूनतम मज़दूरी तक हासिल नहीं कर पाते हैं, इसके विपरीत केरल में काजू के व्यवसाय में लगे मज़दूर, यदि पीस रेट के आधार पर प्रति दिन 200-240 रू. से कम नहीं कमाते हैं। राज्य सरकार के नियमों के हिसाब से, काजू के व्यवसाय में काम करने वाले मज़दूरों को मिलने वाली मज़दूरी इस प्रकार है; खोल उतारना और काटना - खोल हटाने का 22.36 रू. प्रति किलो, पूरे काजू और बाहरी छिलका छीलने के लिए 28.44 रू. प्रति किलो, छिलने के बाद टूटे बादाम को अलग करने के लिए प्रति किलो 19.54 रू. प्रति किलो।

केरल में काजू के व्यवसाय में लगे मज़दूरों के लिए न्यूनतम मज़दूरी तय कर दी गयी हैं: गारडर (कार्य पद): 180 रू., टिन भरने वाला: 185 रू., शारीरिक श्रम (मैकादू) छोटे-छोटे कणों को साफ करने में, फटकन को छीलने, खराब हिस्सों को हटाने और काजू को पृथक करने में: 185 रू. मैकादू (सामान्य): 200 रू., स्टेनसीलॉर: 200 रू., सिरपर सामान ढ़ोने वाला मज़दूर (लोडिंग और अनलोडिंग): 225 रू., फायरमैन: 225 रू., भिगोने और आकार देने वाला: 200 रू., और तेल निष्कर्षण और तेल बहिष्कारित्र: 200 रू.प्रति दिन। इसके अलावा दिहाड़ी और पीस रेट पर काम करने वाले मज़दूरों को केरल सरकार द्वारा तय नियमों के अनुसार प्रति दिन के काम के लिए न्यूनतम मज़दूरी के साथ महंगाई भत्ता भी मिलता है।

इनमें इलेक्ट्रॉनिक गैजेट्स के परिपथ बनाने, कपड़ों की कटाई और सिलाई से लेकर, चमड़ा उत्पादन आदि शामिल हैं।

उत्पादन और वितरण में लगे मज़दूरों की भलाई के लिए उत्पादकों या ग्राहकों की कोई जवाबदेही तय नहीं होती। अनौपचारिक क्षेत्र में कार्यरत अधिकांश मज़दूर अपनी इच्छा से नहीं बल्कि खुद को ज़िंदा भर रख पाने के लिए काम करते हैं। जब इस तथाकथित 'अनौपचारिक' क्षेत्र में इतनी बड़ी संख्या में मज़दूर काम करते हैंतो राज्य इसे केवल 'अनौपचारिक', 'असंगठित' श्रेणी में डाल कर इनकी दिक्कतों के प्रति अपनी आंखें कैसे बन्द कर सकता है?

श्रम विभाग और सरकार द्वारा इन मज़दूरों के हितों की रक्षा करने के लिए फैक्टरी ऐक्ट के प्रावधानों का इस्तेमाल न करना, राजनैतिक इच्छा शक्ति के अभाव का परिचायक है। इससे भी श्रमिकों के अनौपचारीकरण को बढ़ावा मिलता है। इस प्रकार मज़दूरों द्वारा लम्बे संघर्षों से अर्जित संस्थागत सुरक्षा, जो कि फैक्टरी ऐक्ट और इसके कई संशोधनों के रूप में परिणत हुई, अब तेजी से खत्म की जा रही है। ऐसा प्रतीत हो रहा है कि पूंजीवादी अर्थव्यवस्था मज़दूरों की एक बड़ी संख्या को बाजार की सनक और उतार-चढाव में रखे बिना तथा इसके एजेण्टों जैसे व्यापारियों, ठेकेदारों आदि, जो कि वर्तमान व्यवस्था में मज़दूरों की कीमत पर मुनाफा कमाते हैं, के बिना अस्तिव में नहीं रह सकती। यहाँ यह ध्यान देना दिलचस्प है कि फैक्टरी ऐक्ट विशेष रूप से राज्य सरकारों को इस ऐक्ट के प्रावधानों को अन्य तरह के उत्पादन इकाइयों में लागू करवाने का अधिकार देता है। इन प्रावधानों के ऐसे उपयोग का एक उदाहरण हैं केरलं काजू उत्पादन का उद्योग(देखें बॉक्स: काजू बनाम बादाम)। केरल में काजू उद्योग में न्युनतम मज़दूरी का कानून लागू होता है, जिसका मुख्य कारण यह है कि राज्य के अधिकांश मज़दूर यूनियनों में मजबूती से संगठित हैं, इसलिए समय-समय पर राज्य सरकार से कार्य के बेहतर परिस्थितियों की मांग करने में सफल रहे हैं। लेकिन दिल्ली में परिस्थिती काफी अलग है। शहर में आने वाले प्रवासी मज़दूरों की तरफ राज्य सरकार पूरी तरह से अंधी बनी रहती है। असंगठित क्षेत्र की परेशानियों के प्रति, जिसके बिना कोई अर्थव्यवस्था अस्तिवमान नहीं रह सकती, ऐसी उदासीनता गरीबों और उनके श्रम को और अधिक हाशिए पर धकेल देती है।

इसलिए पी.यू.डी.आर. मांग करता है कि:

1. दिल्ली और साथ ही साथ केन्द्र सरकार उचित संशोधनों द्वारा इन बादाम प्रसंस्करण इकाइयों को अनुसूचित उद्योगों के अंतर्गत लाए, ताकि इनमेंफैक्टरी ऐक्ट 1948 और न्युनतम मज़दूरी ऐक्ट 1948 लागू हो सकें।
2. इन इकाइयों में काम करने वाले मज़दूरों की मज़दूरी को दिल्ली में अकुशल और अर्द्ध-कुशल मज़दूरों के लिए निर्धारित मज़दूरी के बराबर स्तर पर लाया जाए। ऐसा न करने पर ठेकेदारों और खारी बावली के व्यापारियों को मज़दूरों के सम्मान के साथ जीवन जीने के बुनियादी अधिकार के उल्लंघन का दोषी माना जाए और कानून के अनुसार उनके खिलाफ कार्यवाही की जाए।
3. श्रम विभाग को अनिवार्य रूप से यह सुनिश्चित करने के लिए हस्तक्षेप करना चाहिए कि ठेकेदार पंजीकृत हों और मज़दूर कल्याण और सुरक्षा उपायों के अंतर्गत आएं। काम से संबंधित स्वास्थ्य समस्याओं के लिए विशेष उपाय उपलब्ध कराए जाएं।
4. ठेकेदारों को प्रसंस्करण कार्य में लगे मज़दूरों के लिए आई कार्ड, वेतन स्लिप और मस्टर रोल की व्यवस्था किए जाने के लिए निर्देशित किया जाए, क्योंकि ये वे चीजें हैं जिसे मज़दूर अपने कानूनी सम्मत अधिकारों को प्राप्त करने के लिए रोज़गार के प्रमाण के रूप में इस्तेमाल कर सकते हैं।

प्रकाशक : सचिव, पीपल्स यूनियन फ़ॉर डैमोक्रैटिक राइट्स (पी.यू.डी.आर.)
पता: डॉ. मौशमी बासु, ए – 6/1, अदिति अपार्टमेंट्स, पॉकेट डी, जनकपुरी, नई दिल्ली 110058
मुद्रक : प्रौग्रेसिव प्रिंटर्स ए –21, झिलमिल इंडस्ट्रिअल एरिया, जीटीरोड, शाहदरा दिल्ली 95
सहयोग राशि : 5रू.
ई मेल : pudrdelhi@yahoo.com
वेबसाइट : www.pudr.org